प्रकरण अट्ठाईस

भारत में वापसी–भाग २

प्रभुपाद की गाड़ी कालका मेल दिल्ली स्टेशन पर पहुँची। प्रभुपाद और उनके दो शिष्यों के पास आरक्षित सीटों के नम्बरों के साथ टिकट थे, लेकिन कोच का नम्बर नहीं था। इसलिए प्रभुपाद सामान के साथ इंतजार करते रहे, जबकि अच्युतानन्द और रामानुज गाड़ी के एक सिरे से दूसरे सिरे तक अपनी कोच की तलाश में दौड़ते रहे।

अपनी सीटें पा लेने और गाड़ी में सवार होने के बाद अच्युतानन्द ने स्वामीजी का बिस्तर खोलकर उसे ऊपर की बर्थ पर फैला दिया। प्रभुपाद छोटी सीढ़ी से ऊपर चढ़ गए, अपनी रूई–भरी रजाई पर आराम से बैठ गए और उन्होंने अपने संस्कृत के *श्रीमद्‌भागवत* को खोल लिया। अच्युतानन्द और रामानुज अपनी सीटों पर बैठ गए। कलकत्ता पहुँचने में लगभग चौबीस घंटे लगने थे।

यात्रा के अन्त में कुछ शिक्षित बंगाली सज्जन प्रभुपाद से दार्शनिक वार्ता करने लगे। "हम किसी मूर्ति की पूजा नहीं करते," एक ने ऊँचे गम्भीर स्वर में धाराप्रवाह अंग्रेजी बोलते हुए साग्रह कहा। "हमारे पास एक संगमरमर का ॐकार है, जिसकी हम पूजा करते हैं और हम बैठते हैं और उसकी प्रार्थना करते हैं।"

"वह भी एक मूर्ति है," प्रभुपाद ने कहा। वे उनकी दार्शनिक मान्यता पर कोई सीधा आक्रमण करना नहीं चाहते थे।

"हम कर्म–योग का अभ्यास करते हैं," प्रभुपाद की पूर्व उक्ति पर ध्यान न देकर वह सज्जन कहते गए। "क्योंकि कर्म–योग में आप अपनी स्थिति में बने रह सकते हैं।"

"किन्तु कर्म–योग आत्मा का पूरा समर्पण नहीं है," प्रभुपाद ने कहा, "भक्ति के स्तर पर आना जरूरी है।"

"ओह, नहीं," उस सज्जन ने प्रतिवाद किया, "भावुकता बहुत हानिकर है। कर्म–योग—"

श्रील प्रभुपाद भड़क उठे, "कर्म–योग मूर्खों के लिए है।" मौन छा गया।

एक दूसरा व्यक्ति, जो बंगाली सज्जनों के साथ नहीं था, लेकिन उनकी बगल में बैठा

था, बोल उठा, "स्पष्टत: स्वामीजी विद्वान पुरुष हैं। आपको उनके साथ इस तरह वाद-विवाद नहीं करना चाहिए।" जिस बंगाली पर प्रभुपाद बिगड़ गए थे, वह उठा और दूसरी सीट पर चला गया। बाद में वह फिर वापस आ गया।

"क्या मैंने आपका अपमान किया है?" प्रभुपाद ने उससे पूछा।

"नहीं, नहीं, नहीं," उसने उत्तर दिया, "लेकिन *गीता* उपदेश के विषय में मैंने किसी को ऐसा कहते नहीं सुना।"

बंगाली यात्री तब अच्युतानन्द से बात करने लगे, अपना अपना सिगरेट जलाकर वे उनके सामने स्वतंत्रतापूर्वक पीने लगे, यद्यपि प्रभुपाद के सामने ऐसा करने का साहस उन्हें नहीं हुआ था (एक साधु के सामने धूम्रपान उचित नहीं था)। प्रभुपाद के उदाहरणों में से एक को उद्धृत करते हुए अच्युतानन्द ने उन्हें बताया कि शेष बंगाली लोग बहुत दुखी थे कि बंगाल से पूर्वी पाकिस्तान अलग हो गया है। लेकिन कृष्णभावनामृत, लोगों को अन्तर्राष्ट्रीय, विश्वजनीन चेतना के स्तर पर पहुँचा सकता है। तब इस तरह का कोई विभाजन नहीं होगा। बंगालियों ने अच्युतानन्द की टिप्पणी की सराहना की, यद्यपि वे सिगरेट का धुआँ उसके मुँह पर फैकते रहे, जबकि गाड़ी कलकत्ता की अन्तिम दूरी तय करने के लिए खड़खड़ाती हुई भाग रही थी।

हावड़ा स्टेशन पर प्रभुपाद का स्वागत अधिकतर उनकी बहिन के परिवार के लोगों और गोस्वामी मठ के भक्तों ने किया। लगभग पचास लोग उपस्थित थे। उन्होंने स्वामीजी को फूल-मालाएँ पहनाई और चंदन का तिलक लगाया और उनको और उनके शिष्यों को ले जाकर एक कार में बैठाया। अच्युतानन्द और रामानुज ने देखा कि यद्यपि स्वामीजी की बहिन स्वामीजी से कद में छोटी और गोल-मटोल थीं, लेकिन उनका चेहरा प्रभुपाद से बिल्कुल मिलता-जुलता था। उनका नाम भवतारिणी था, लेकिन प्रभुपाद ने शिष्यों से उन्हें 'पिसीमा,' 'आंट' कहने को कहा।

जब प्रभुपाद सड़कों में से होकर जा रहे थे, तो उन्होंने सिंह-वाहिनी, दश-बाहु दुर्गा की कई मूर्तियाँ देखी। कलकत्ता में मास-पर्यन्त चलने वाला बंगाल का सबसे बड़ा धार्मिक समारोह, काली-पूजा का पर्व, देवी काली के सम्मान में मनाया जा रहा था। शहर-भर में बैंड-बाजों और रेडियो संगीत की धूम थी। वितान तने थे, जिनके नीचे बने मंचों को रंग-बिरंगे प्रकाश से अलंकृत किया गया था।

जब प्रभुपाद दक्षिण कलकत्ता में अपनी बहिन पिसीमा के घर पहुँचे, तो उनके सम्बन्धियों ने उन्हें बैठाया, उनके सम्मान में उनकी आरती उतारी और परम्परानुसार उन्हें सुगंध, प्रज्वलित दीप और फूल अर्पण किए। उन्होंने उनके चरण भी प्रक्षालित किए। प्रभुपाद सम्बन्धियों से भरे कमरे में मुसकराते हुए बैठे रहे। सम्बन्धियों को गर्व था कि

प्रभुपाद भगवान् कृष्ण की ओर से अमेरिका की यात्रा करके लौटे थे।

जब प्रभुपाद के परिवार के सदस्य हरे कृष्ण कीर्तन कर रहे थे, तब कमरे के बाहर बैठी घर की महिलाएँ ऊँची तीखी हुंकार-भरी आवाज में गाने लगीं। अच्युतानन्द और रामानुज चौंक उठे।

पिसीमा ने प्रभुपाद की वापसी के उपलक्ष्य में एक बड़े भोज की तैयारी की थी। अधिकतर व्यंजन सरसों के तेल में तैयार किए गए थे। प्रभुपाद ने प्रसाद ग्रहण करके बहिन को संतोष दिया, यद्यपि उनकी तबियत अच्छी नहीं थी और ट्रेन की यात्रा से वे थक गए थे।

समारोह के तुरन्त बाद प्रभुपाद और उनके शिष्य सोने चले गए। उनका स्वास्थ्य फिर डगमगाने लगा—इस बार उनकी बहिन के भारी खाने से—और उन्हें अपने हृदय पर तनाव मालूम हुआ। उन्होंने आयुर्वेदिक डॉक्टर को बुलवाया, जिसने अच्युतानन्द को बताया कि हल्की मालिश कैसे की जाती है, जिससे रक्त के प्रवाह में सहायता मिले और उसने प्रभुपाद को मिठाई खाने पर रोक लगा दी।

• • •

जब प्रभुपाद अच्छे होने लगे तो वे नियमित रूप से शाम को अपने कमरे में प्रवचन करने लगे। यद्यपि वे अँग्रेजी में बोलते थे (अपने शिष्यों के लिए) तब भी कमरा उनके मित्रों और सम्बन्धियों से शीघ्र ही पूरी तरह भर जाता था। काली पूजा के कारण आमतौर पर बाहर से शोर-गुल आता। पिसीमा के घर के पास एक विशाल तम्बू लगा था, जो संध्याकालीन जमघटों का केन्द्र था। उसमें एक दुकान मिठाइयों की थी। वहाँ आतिशबाजी भी होती थी और लाउडस्पीकर पर *जूली एंड्रूज* के 'साउन्ड आफ म्यूजिक' फिल्म के गाने बड़े जोर से बजाए जाते थे।

एक संध्या को जब प्रभुपाद बोल रहे थे कि मेरी योग्यता केवल यह है कि अपने गुरु महाराज में मेरा अटल विश्वास है—तभी दरवाजे के ठीक बाहर एक बड़ा पटाखा फूटा। श्रोता सहनशीलता के साथ मुसकराने लगे। "हाँ," प्रभुपाद ने कहा, उन्होंने विस्फोट को अपने शब्दों की पुष्टि के रूप में लिया। "यह शानदार है।"

एक रात को प्रभुपाद ने समझाया कि *भगवद्गीता* के अनुसार देवों के उपासक कम बुद्धि वाले होते हैं। उन्होंने कहा कि लोग काली की पूजा सांसारिक फलों के लिए करते हैं। लेकिन चूँकि सभी सांसारिक पदार्थ अस्थायी हैं, इसलिए ऐसी पूजा कृष्ण की पूजा से हीन है। काली अपने उपासक को जन्म-मरण से मुक्ति नहीं दिला सकती।

"कौन अधिक अच्छा है?" अच्युतानन्द ने पूछा, "ईसाइयों और यहूदियों की पूजा,

जो अधिकतर निराकार है या काली के उपासकों द्वारा देवों की पूजा?"

"काली की पूजा अधिक अच्छी है," प्रभुपाद ने कहा, "क्योंकि उपासक वैदिक-परम्परा में है। एक ईसाई या यहूदी की अपेक्षा उनसे राधा-कृष्ण के सामने नत-मस्तक होने या हरे कृष्ण गाने की अधिक सम्भावना है। भविष्य में उनके कृष्ण-भक्त होने की सम्भावना की जा सकती है, यदि वे अपनी सांसारिक आसक्ति का त्याग कर दें।"

• • •

प्रभुपाद अपने गुरु-भाइयों और उनके शिष्यों को हमेशा आमंत्रित करते थे कि वे अमेरिका जाकर उनका साथ दें। कभी कभी वे ऐसा इसलिए करते प्रतीत होते कि प्रभुपाद चाहते थे कि उनके गुरु-भाई कम-से-कम प्रचार करने के बारे में सोचें तो सही। भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ने एक बार सबको फटकार बताई थी कि उनका गौड़ीय मठ आश्रम एक 'सांझे के भोजनालय' के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। सदस्य हररोज बाहर जाते थे और भिक्षा इकट्ठी करते थे, जिससे वे शाम को एक साथ भोजन कर सकें। उनके पास प्रचार के लिए कोई गतिशील दूरदृष्टि न थी। इसलिए प्रभुपाद उन्हें प्रायः आमंत्रित करते रहते थे—"तुम लोगों को अमेरिका जाना चाहिए। मेरे साथ आओ।" प्रभुपाद का ये नारा उन्हें आन्दोलित करता रहता, यद्यपि वे सचमुच जा नहीं सकते थे। भक्तिसारंग गोस्वामी के आश्रम में जाने पर प्रभुपाद ने देखा कि श्रोताओं में अधिकतर वृद्धा विधवाएँ थीं। लेकिन उनका प्रवचन यथापूर्व रहा।

• • •

एक दिन प्रभुपाद के गुरु-भाई हरिदास स्वामी आए। वे गोलमटोल थे और ऊँची आवाज में बहुत तेजी से बोलते थे : "अमेरिका से आपकी वापसी पर आपसे मिलकर बहुत प्रसन्नता है। बहुत बढ़िया—कृष्ण स्वयं परमार्थ हैं, सभी हेतुओं के हेतु—मै चाहता हूँ कि आप मेरे मन्दिर में आएँ।"

जब हरिदास महाराज एक अलग कमरे में गए तो प्रभुपाद अच्युतानंद की ओर मुड़े और कहने लगे "वे चाहते हैं कि हम उनके मन्दिर में जाँए। लेकिन वहाँ जाने के लिए मुझे एक रिक्शे से जाना पड़ेगा, तब एक ट्राम-कार से, फिर ट्रेन से और उसके बाद फिर दूसरे रिक्शे से।" प्रभुपाद के दुर्बल स्वास्थ्य से अवगत अच्युतानन्द नकारात्मक ढंग से सिर हिलाने लगा।

जब हरिदास महाराज कमरे में वापस आए, तो अच्युतानंद बोला कि स्वामीजी उनके मठ को नहीं जा सकते थे। "तुम कौन हो?" हरिदास महाराज ने गुस्से में कहा, "तुम

केवल एक ब्रह्मचारी हो! तुम्हें जीवन का खतरा उठाना चाहिए!"

अच्युतानंद ने कहा, "मैं अपने जीवन का खतरा ले सकता हूँ, किन्तु अपने गुरु महाराज के जीवन को खतरे में नहीं डाल सकता।"

हरिदास महाराज अपमानित अनुभव करते हुए चले गए। "चिन्ता मत करो," प्रभुपाद बोले, "वह बहुत बातूनी है।"

प्रभुपाद अपने गुरु-भाई बी.पी. केशव महाराज से मिलने गए, जिन्होंने १९५९ ई. में उन्हें संन्यास की दीक्षा दी थी। प्रभुपाद फर्श पर बैठे और अपने गुरु-भाई से बंगाली में बात करते रहे। केशव महाराज बहुत वृद्ध थे और देखने में अपनी मृत्यु-शैया पर पड़े लगते थे। प्रभुपाद ने केशव महाराज को अच्युतानन्द से भजन सुनवाया। केशव महाराज ने प्रभुपाद से प्रार्थना की कि वे नवद्वीप में उनके देवानन्द मठ में जायें।

• • •

श्रील प्रभुपाद एक स्थायी अधिवासी के रूप में संयुक्त राज्य वापस जाना चाहते थे। लेकिन उनके अमेरिका के शिष्य संयुक्त राज्य के आप्रवासी विभाग से अनुमति प्राप्त करने में असमर्थ रहे थे। बोस्टन के भक्तों ने हार्वर्ड के कुछ भारतीय-विद्या के आचार्यों से सम्पर्क किया था, लेकिन प्रभुपाद के महत्त्व के सम्बन्ध में उनके हस्ताक्षर से कोई वक्तव्य वे प्राप्त नहीं कर सके थे। इस्कान के सभी केन्द्रों ने ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी को आमंत्रित करते हुए औपचारिक पत्र लिखे थे और उनकी प्रतियाँ संयुक्त राज्य आप्रवासी विभाग को पेश की थीं। लेकिन जब तक कि भक्तों की ओर से कोई और अधिक प्रभावोत्पादक प्रमाण नहीं प्रस्तुत किया जाता, जैसे कोई सरकारी संस्तुति या किसी विश्वविद्यालय के किसी प्रभाग में नियुक्ति, तब तक प्रभुपाद संयुक्त राज्य के अधिवासी नहीं बन सकते थे।

> मैं मांन्ट्रियल जाने को बहुत उत्सुक हूँ। इसलिए तुम भरसक प्रयत्न करो कि *श्रीमद्भागवत* और *श्रीमद्भगवद्गीता* के अधिकृत वैष्णव अनुष्ठाता होने के आधार पर मुझे आप्रवासन विजा प्राप्त हो जाये।

स्थायी आप्रवासन के लिए अनिश्चित काल तक प्रतीक्षा करने के स्थान पर प्रभुपाद ने पर्यटक विजा के लिए आवेदन करने का निर्णय लिया। वे अच्युतानन्द के साथ हैरिंगटन रोड स्थित संयुक्त राज्य के वाणिज्य दूतावास में गए। वहाँ वे कलकत्ता के मध्य एक लघु अमरीकी क्षेत्र में प्रविष्ट हुए, जहाँ हर चीज चमक-दमक वाली, नवीन और कार्यक्षम थी

: वातानुकूल यंत्र, स्टेनलेस स्टील वाटर कूलर, विद्युत-चालित सुरक्षा दरवाजे, नौसैनिक और अमेरिकन ध्वज। वाणिज्य दूतावास के सचिव के सामने बैठे हुए प्रभुपाद ने अपने आपको छोटा और विनीत अनुभव किया। "मैं अमेरिका में अपने शिष्यों से मिलने के लिए विजा चाहता हूँ।" उन्होंने नरमी से कहा।

"क्या आपके पास कोई पत्र है ?" सचिव ने पूछा। अच्युतानन्द ने मन्दिरों से प्राप्त पत्र दिखलाए। सचिव ने उन पर दृष्टिपात किया और तुरन्त प्रभुपाद को चार महीने के लिए विजा दिया। वाणिज्य दूतावास से जाते हुए प्रभुपाद ने कहा, "इस समय मुझे कुछ भी मिल जाये, बाद में यह बढ़ सकता है।"

१९ अक्तूबर को प्रभुपाद ने अपनी आसन्न वापसी के बारे में हयग्रीव को लिखा।

> मैं संयुक्त राज्य अमेरिका लौटने के लिए तैयारी कर रहा हूँ और परसों मैंने पर्यटक विजा प्राप्त कर लिया है। नवद्वीप से लौटते ही शायद मैं यथासम्भव तुरन्त अमेरिका आऊँगा।

और २२ अक्तूबर को उन्होंने उमापति को लिखा।

> तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि तुम्हारे देश आने के लिए मैं पर्यटक विजा प्राप्त कर चुका हूँ और अपने पर्यटन एजेंट से कह चुका हूँ कि शीघ्र से शीघ्र किसी तिथि को मेरी सीट आरक्षित करा दे। मेरा विचार है कि मैं नवम्बर के मध्य तक तुम्हारे बीच पहुँच जाऊँगा।

• • •

२४ अक्तूबर को प्रभुपाद ने अच्युतानन्द और रामानुज के साथ नवद्वीप की यात्रा की। यद्यपि स्थानीय गाड़ी ने चार घंटे लिए, लेकिन यात्रा में बंगाल के हरे-भरे ग्रामीण-क्षेत्रों की नैसर्गिक सुन्दरता उद्घाटित होकर सामने आई और इस सुखद यात्रा से प्रभुपाद का स्वास्थ्य सुधरता मालूम हुआ। नवद्वीप पहुँचने तक अच्युतानंद और रामानुज को भी कलकत्ता के कठिन जीवन से राहत मालूम होने लगी। कई सप्ताहों के बाद पहली बार पसीने की बूँदों से भीगे बिना वे अपनी आँखें खोल सकते थे।

नवद्वीप रेलवे स्टेशन पर केशव महाराज के देवानन्द गौड़ीय मठ के एक बड़े कीर्तन-दल के ब्रह्मचारियों ने प्रभुपाद का स्वागत किया। ब्रह्मचारी बहुत ही साफ-सुथरे थे; सबकी केसरिया वेशभूषा बिल्कुल एक रंग में रंगी थी; हर एक के मस्तक पर लगा वैष्णव

तिलक बहुत साफ और स्पष्ट था, उनके सिर सफाई से घुटे थे, उनकी शिखाएँ नियमानुकूल थीं। उन्होंने प्रभुपाद और उनके शिष्यों को कमल से मिलते-जुलते पुष्पों से निर्मित सुगंधित मालाएँ अर्पित कीं और सब आराधना की मुद्रा में श्रील प्रभुपाद के चारों ओर खड़े हो गए। श्रीधर महाराज के भी कुछ शिष्य वहाँ उपस्थित थे; वे रिक्शाओं में उन तीनों को अपने गुरु-आश्रम ले जाना चाहते थे। यद्यपि दोनों समुदायों में प्रभुपाद को ले जाने के लिए मौन प्रतिस्पर्द्धा थी, पर प्रभुपाद श्रीधर महाराज के आश्रम में जाने को पहले ही अपनी स्वीकृति दे चुके थे। उन्होंने देवानंद आश्रम के सदस्यों से वादा किया कि बाद में वे उनके यहाँ जायेंगे।

• • •

स्टेशन से निकलते ही रिक्शा ऐसी सड़क पर चलने लगी, जिसके दोनों ओर स्थानीय वनस्पतियों की हरियाली आच्छादित थी : केले के वृक्ष, लम्बे लम्बे बांस और तरह-तरह के प्रफुल्लित पुष्प। प्रभुपाद ने सीधे-सादे ग्रामीणों को अपने फूस और मिट्टी के छप्परों के आसपास काम करते देखा और दूर पर उन्हें दिखाई दिया श्रीधर महाराज के मन्दिर का सर्पिल शिखर।

श्रीधर महाराज के आश्रम के बाहरी द्वार पर प्रभुपाद का स्वागत हरे कृष्ण गाते और करताल और मिट्टी के मृदंग बजाते हुए एक कीर्तन-दल ने किया। प्रभुपाद मन्दिर में प्रविष्ट हुए, उन्होंने राधा-कृष्ण के श्रीविग्रहों को प्रणाम किया और तब वे अपने गुरु-भाई से मिलने गए।

श्रीधर महाराज बहुत वृद्ध हो चले थे, उन्हें कम दिखाई देने लगा था और अंगों के जोड़, गठियारो से कड़े हो गए थे। वे प्राय: अपने कमरे में ही रहते थे या कभी-कभी अपने बरामदे में; वे बहुत धीरे-धीरे जर्जर गति से चलते थे। वे संयमी और उदार वैष्णव थे और प्रभुपाद और उनके शिष्यों को देखते ही खुले दिल से हँस पड़े। वे प्रवाहित अंग्रेजी भाषा में उनके अमेरिका में प्रचार-कार्य की प्रशंसा करने लगे। वे बार-बार प्रभुपाद के वाक्यांश "कृष्णभावनामृत" का उपयोग कर रहे थे। उन्होंने कहा कि स्वामीजी का कार्य भगवान् चैतन्य की इस भविष्यवाणी की पूर्ति था कि एक दिन कृष्णभावनामृत का प्रसार सारे विश्व में हो जायेगा। बिना किसी ईर्ष्या की झलक के वे हँसते रहे, मुसकराते रहे और कृष्णभावनामृत-आन्दोलन की प्रशंसा करते रहे।

"तो आप 'कृष्णभावनामृत' वाक्यांश को पसन्द करते है?" प्रभुपाद मुसकराए।

"हाँ," श्रीधर महाराज ने उत्तर दिया, "और स्वामी महाराज के शिष्यों को भी।" वे अच्युतानंद और रामानुज की ओर मुड़े। "बहुत थोड़े प्रयास से तुम्हारा प्रचार दूर-दूर तक

पहुँचेगा।"

लड़के आश्चर्य-चकित थे। यह एक ऐसी चीज थी, जिसके बारे में उन्हें अमेरिका लिखना होगा : वे इस वनस्थली के स्वर्ग में वयोवृद्ध श्रीधर महाराज के साथ एक मन्दिर की छत पर बैठे थे, जो भगवान् चैतन्य के नाम में किए गए स्वामीजी के कार्य को सबसे महान् बताकर उसकी प्रशंसा कर रहे थे और स्वामीजी आराम से बैठे मुसकरा रहे थे और विनम्र भाव से उत्तर दे रहे थे। लड़कों के लिए उनकी यात्रा का यह चरम-बिन्दु था।

प्रिय सत्स्वरूप,

मेरा आशीष। मुझे हार्वर्ड विश्वविद्यालय का आमंत्रण विधिवत् मिल गया है। ज्ञात हुआ है कि वे मेरा कार्यक्रम २० नवम्बर को ६ और १० बजे के बीच रात में रख रहे हैं। पर्यटक विजा के बल पर मैं तुरन्त प्रस्थान कर सकता हूँ, लेकिन मैं मुकुंद के मेरे लिए स्थायी विजा पाने के प्रयत्न के बारे में उसके पत्र की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। कल हम सभी लोग नवद्वीप आए। यह स्थान मेरे एक गुरु-भाई द्वारा स्थापित एक दूसरा प्रतिष्ठान है। यह बहुत बढ़िया और विस्तृत स्थान है और मेरे गुरु-भाई, बी.आर. श्रीधर महाराज ने हम लोगों के रहने के लिए एक पूरा बढ़िया मकान दे दिया है। वे हमारे संघ के साथ सहयोग करने को भी राजी हैं। हम उनका जन्मोत्सव कल मना रहे हैं और ब्रह्मचारी यह सीखेंगे कि अपने गुरु-महाराज का जन्मदिवस कैसे मनाया जाता है।

व्यास-पूजा दिवस अर्थात् बी.आर. श्रीधर महाराज का जन्मोत्सव मनाने का दिवस २७ अक्तूबर को था। उनके शिष्यों ने मन्दिर-मार्ग पर एक पंडाल बनाया था और लगभग सौ लोग उत्सव में सम्मिलित हुए। श्रीधर महाराज व्यास-आसन पर विराजमान थे और प्रभुपाद और अन्य संन्यासी, फूलों की माला पहने हुए उनकी बगल में कुर्सियों पर बैठे थे। प्रभुपाद बंगाली में बोले। प्रभुपाद ने कृष्णभावनामृत के प्रचार की महिमा का जो बखान किया, उससे प्रेरित होकर श्रीधर महाराज के कुछ शिष्यों ने अपने गुरु महाराज की व्यास-पूजा-प्रशस्ति में अंग्रेजी में भाषण दिए। श्रीधर महाराज भी अंग्रेजी में बोले और उन्होंने कृष्णभावनामृत और इन्द्रियों पर एक बहुत विज्ञान-सम्मत भाषण दिया। बाद में प्रभुपाद ने अपने शिष्यों से कहा : "उनकी सिद्धियाँ महान् हैं, पर वे उन्हें अपने तक रख रहे हैं।"

हर दिन प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व श्रीधर महाराज गाँवों में कीर्तन करने के लिए ब्रह्मचारियों का एक दल भेजते थे। प्रभुपाद के अनुरोध पर अच्युतानन्द और रामानुज उनके साथ जाने लगे। वे सूर्योदय के पहले जाते और सूर्यास्त तक लौटते थे। यद्यपि

प्रभुपाद और श्रीधर महाराज सामान्यतया मन्दिर में ही रहते थे, एक दिन वे एक रिक्शा में बैठकर नवद्वीप की सड़कों में कीर्तन-दल के साथ निकल पड़े।

• • •

देवानंद मठ का समारोह विस्तृत पैमाने पर था। कलकत्ता में भक्तिसारंग स्वामी के आश्रम में केवल विधवाएँ उपस्थित थीं, पर बी.पी. केशव महाराज के मठ में लगभग दो सौ ब्रह्मचारी और बीस संन्यासी थे। हाँ, ब्रह्मचारियों में से कुछ सार्वकालिक नहीं थे, वे बाहर के स्कूल में पढ़ने जाते थे; इसलिए आश्रम का वातावरण कुछ-कुछ एक सामाजिक संस्था के समान था। लेकिन जब कीर्तन और मन्दिर की परिक्रमा शुरू हुई, तो उसमें सात-सौ लोग भाग ले रहे थे। नितांत त्रुटिहीन वेशभूषा पहने संन्यासी—जिनके केसरिया कपड़े का हर अंश, यहाँ तक कि उनके दंड को आवेष्टित करने वाला कपड़ा भी—बिल्कुल एक रंग में रंगा था—श्रीविग्रहों के समक्ष आगे-पीछे होकर नृत्य कर रहे थे। एक दर्जन संन्यासी दल बनाकर नाच रहे थे। उनके दंड साथ घूमते थे, वे साथ उठते और गिरते थे, एक साथ आगे, एक साथ पीछे जाते थे। ब्रह्मचारी समुदाय यह देखकर प्रसन्नता में मग्न था।

प्रभुपाद अन्य विशिष्ट जनों के साथ मंच पर बैठे थे और उन्होंने समारोह में उपस्थित श्रोताओं को सम्बोधित किया। प्रभुपाद के अनुरोध पर अच्युतानन्द ने कुछ शब्द बंगाली में कहे, जिन्हें सुनकर लोग हँसने और प्रशंसा करने लगे। श्रीधर महाराज बड़ी गम्भीरता से बंगाली में बोले। देवानंद मठ के एक संन्यासी ने जो अपने अनुपस्थित गुरु, बी.पी. केशव महाराज के स्थान पर बोल रहा था, ओजपूर्ण वाणी में उद्घोषित किया कि यद्यपि भगवान् चैतन्य महाप्रभु के आन्दोलन के बारे में यह भविष्यवाणी की गई थी कि वह सारे संसार में फैल जायेगा, पर किसी को मालूम नहीं था कि यह किस प्रकार सम्भव होगा। अब भक्तिवेदान्त स्वामी को धन्यवाद देना चाहिए कि उनके कार्यों से यह सम्भव हो रहा है।

संध्या-समय एक बड़े भोज के बाद प्रभुपाद अपने दल के साथ श्रीधर महाराज के आश्रम में लौट गए। श्रीधर महाराज ने प्रभुपाद को सूचित किया कि देवानंद मठ का बल परिमाण या संख्या पर था, जबकि उनका अपना आश्रम योग्यता या गुणवत्ता पर बल देता था। अच्युतानन्द यह जानने को व्यग्र था कि इसका तात्पर्य क्या था और वह प्रभुपाद से पूछना चाहता था, लेकिन इसके लिए समय उपयुक्त नहीं जान पड़ा।

• • •

नौ दिन नवद्वीप में रहने के बाद प्रभुपाद कलकत्ता लौटने और संयुक्त राज्य के लिए

रवाना होने की तैयारी करना चाहते थे। वे और उनके दोनों शिष्य रिक्शा से स्टेशन पहुँचे और वहाँ से कलकत्ता के लिए गाड़ी में सवार हो गए।

ट्रेन में अच्युतानन्द ने वह प्रश्न किया, जो उसके मन में कब से उठ रहा था, "स्वामीजी, आप और श्रीधर महाराज ने क्या विचार-विमर्श किया?"

"बहुत से विषयों पर," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "लेकिन यदि मैं तुम्हें अभी बताऊँ, तो तुम बेहोश हो जाओगे।" कुछ देर मौन रहने के बाद प्रभुपाद बोले, "तो भी, मैंने उनसे अपने संघ का अध्यक्ष बनने को कहा। मैं जानता था कि वे स्वीकार नहीं करेंगे। वे हर चीज को अपने में रख रहे हैं। जो कुछ भी हो, यह तुम्हारी समझ के बाहर है। मेरे किसी गुरु-भाई के प्रति दुर्भाव मत रखो। वे सभी महान् आत्माएँ हैं। केवल प्रचार और प्रसार को लेकर कुछ मतभेद है। अपने मन में भी उनके लिए बुरे विचार मत रखना। साथ ही उनके साथ गहरा मेल-जोल मत बढ़ाना।"

अच्युतानन्द ने कहा, "हो सकता है कि यदि इन दोनों संन्यासियों में एक दूसरे के गुण इकट्ठे होते..."

"आह! हाँ," प्रभुपाद बोले, "अब तुम मेरा आशय समझ गए हो।"

• • •

कलकत्ता आने में प्रभुपाद का इरादा केवल अमेरिका के लिए तैयारी करना था। वे पर्यटक विजा प्राप्त कर चुके थे; लेकिन वे सोचते थे कि यदि वे भारत में कुछ समय और रुक जायें, तो सैन फ्रांसिस्को में, हो सकता है, मुकुंद उनके स्थायी अधिवास के लिए विजा पाने में सफल हो जाये। वे अपनी बहिन के घर कलकत्ता में कुछ आखिरी दिन बिताने के लिए गए। लेकिन कुछ ही दिन के बाद उन्हें लगा कि राधा-कृष्ण के अर्चाविग्रह—जिस अर्चाविग्रह की उपासना उन्होंने बचपन में की थी—उन्हें बुला रहे थे।

जब वे मात्र बच्चे थे, तब उनका सेवक उन्हें और उनके चचेरे भाई सुबुद्धि मल्लिक को एक बच्चा-गाड़ी में ले जाता था और गाड़ी को मन्दिर के आंगन में खींचकर उन दोनों को राधा-गोविन्द की वेदी के सामने खड़े कर देता था। ज्योंही वे चलने लगे थे, उनके पिताजी उनका हाथ पकड़कर हर दिन उन्हें अर्चा-विग्रह के समक्ष ले जाते थे। कभी कभी प्रभुपाद अकेले चले जाते थे और राधा-कृष्ण को देखते घंटों खड़े रहते थे। तिरछी नजरों वाले राधा-कृष्ण अपने सुन्दर परिधान और आभूषणों में उन्हें बहुत सुन्दर लगते थे। राधा-गोविन्द की प्रसन्नता ही के लिए पाँच वर्ष की आयु से आरम्भ करके वे बचपन में भी छोटी रथयात्रा का पर्व मनाया करते थे।

अभी दो सप्ताह हुए, जब प्रभुपाद अपनी बहिन के घर में ठहरे हुए थे, उनके स्वास्थ्य

ने उन्हें उत्तर कलकत्ता में राधा-गोविन्द के श्रीविग्रह के दर्शनों के लिए जाने से रोका था और उनका आशीर्वाद लिए बिना ही वे नवद्वीप चले गए थे। लेकिन अब यद्यपि वे कमजोर थे और संयुक्त राज्य जाने की तैयारियों में व्यस्त थे, उन्हें ऐसा लगा कि श्रीविग्रह उन्हें बुला रहे थे।

गत १५० वर्षों से राधा-गोविन्द मन्दिर का संरक्षण अभिजात मल्लिकों के हाथ में था, जो प्रभुपाद के अपने ही परिवार के अंग थे। मल्लिक हैरिसन रोड (जो अब महात्मा गाँधी मार्ग है) स्थित सभी मकानों के मालिक थे और मन्दिर के सामने के मकानों से जो किराया आता था, उससे राधा-गोविन्द की वैभवपूर्ण पूजा का व्यय चलता था। उन दिनों श्रीविग्रहों की पूजा कीर्तन के बड़े कक्ष में अलंकृत मंच पर होती थी और श्रीविग्रहों को रेशमी परिधानों, सुनहरे रत्नजड़ित मुकुटों और कण्ठहारों से सजाया जाता था। पड़ोस के सभी पवित्र वैष्णव परिवार वहाँ एकत्रित होते थे और कृष्ण के जन्मदिन, जन्माष्टमी को अंग्रेज साहब और उनकी मेमें भी आती थीं।

लेकिन अब मल्लिक परिवार के पास योरोपीय कला और साज-सज्जाओं के अवशेष मात्र रह गए थे, जिन से उनके घर और मन्दिर भरे थे—जो विगत दिनों के वैभव की याद दिलाते थे। और राधा-गोविन्द की उपासना में करुणाजनक गिरावट आ गई थी।

प्रभुपाद को यह उपेक्षा देखकर पीड़ा हुई। राधा और गोविन्द अब मल्लिकों के जीवन के केन्द्र नहीं रह गए थे। श्रीविग्रहों की पूजा अब भी होती थी—वेतन-भोगी ब्राह्मणों द्वारा—लेकिन दर्शन के लिए बहुत थोड़े लोग आते थे। अब मुख्य आकर्षण-बिन्दु देवी काली की सुनहरी मूर्ति था, जो कीर्तन-कक्ष में बड़े मंच पर स्थापित थी। राधा और गोविन्द जो पीढ़ियों से मल्लिक परिवार में थे, अब मल्लिक आंगन में ऊपर के एक छोटे-से कमरे में हटा दिए गए थे। उनके परिधान में कोई सुन्दरता नहीं रह गई थी, उनके मूल्यवान मुकुट और आभूषण गायब हो गए थे और अब पहले की तरह कीर्तन नहीं होते थे। प्रात:काल एक वेतन-भोगी ब्राह्मण आता था। वह उनके चमकदार अंगो पर चंदन का लेप लगाता था, जो कुछ सादा परिधान शेष रह गए थे, उनसे उन्हें सावधानीपूर्वक विभूषित करता था और उनके गले में चमेली की मालाएँ पहनाता था। एक-दो विधवाएँ बैठी इन मौन कार्यकलापों को देखती रहती थीं।

कृष्णभावनामृत भारत में उपेक्षा के कारण मर रहा था। कम-से-कम कलकत्ता में तो मर ही रहा था। और भारत के बहुत-से स्थानों में, वृन्दावन तक में निराकार उपासना का दर्शन जोर पर था और विशाल प्राचीन मन्दिर कबूतरों, बन्दरों और कुत्तों के आवास बन रहे थे। यद्यपि यह बहुत खेदजनक था, पर इससे प्रभुपाद के इस विश्वास को केवल बल मिल रहा था कि पश्चिम की उर्वर भूमि में उनके वापस जाने की जरूरत थी। भारत में

यद्यपि उपासना की भावना समाप्त हो रही थी, पर पश्चिम में उसका विकास अभी शुरु हो रहा था—न्यूयार्क, सैन फ्रांसिस्को, मान्ट्रियल और बोस्टन में।

यदि शुद्ध कृष्णभावनामृत भारत में मर रहा था, तो उसे उर्वर पश्चिम में स्थानान्तरित क्यों नहीं करना चाहिए? वहाँ यह खूब फूलेगा-फलेगा। यह संसार-भर में फैलेगा, यहाँ तक कि भारत में भी फिर से वापस आएगा। पश्चिम के अनुकरण पर तुला भारत जब भौतिक दृष्टि से उन्नत अमेरिकनों को कृष्णभावनामृत अपनाते देखेगा, तो वह स्वयं अपनी संस्कृति का मूल्यांकन फिर से करेगा।

प्रभुपाद संयुक्त राज्य अमेरिका में कृष्णभावनामृत क्रान्ति का समारंभ देख रहे थे। वे अपने आपको इसका स्रष्टा नहीं मानते थे। वे कृष्णभावनामृत के सेवक थे। भगवान् चैतन्य की अभिलाषा थी कि हर भारतीय कृष्णभावनामृत के संसारव्यापी प्रसार का प्रयत्न करे। दुर्भाग्य से श्रील प्रभुपाद के अधिकतर गुरु-भाइयों के लिए भी शास्त्रों के वे ही श्लोक पहेली बन गए थे, जो कृष्णभावनामृत आन्दोलन के संसारव्यापी प्रसार की भविष्यवाणी करते थे। वे इसे स्वीकार करते थे।

पर शीघ्र ही वे देखेंगे। पश्चिम में बड़ी सम्भावनाएँ थीं। प्रभुपाद ने अपने बहुत-से गुरु-भाइयों को समाचार-पत्रों के लेख दिखाए थे; जैसे—"टाम्पकिंस *स्क्वायर* पार्क में कीर्तन करते हुए स्वामी के शिष्य स्टैनफोर्ड यूनीवर्सिटी में "प्राचीन भाव-समाधि नृत्य"—और वे अपने साथ कुछ शिष्य ले आए थे। ये भी केवल शुरुआत थीं। और बहुत अधिक करने को शेष था।

और सहायता कौन करेगा? बी.पी. केशव महाराज मरने वाले थे। श्रीधर महाराज कहीं जा नहीं सकते थे। तब फिर कौन? अधिकतर भारतीय निराकारवादी, अभक्त योगी या देवताओं के उपासक थे। जब श्रील प्रभुपाद राधा-कृष्ण के श्रीविग्रह के सामने खड़े होकर अच्युतानन्द और रामानुज को समझा रहे थे कि वे बचपन में उनकी उपासना कैसे करते थे और किस प्रकार कृष्णभावनामृत में वे उनके पहले प्रेरणा-स्रोत बने थे, तो वे अपने अन्तर्मन की गहराई में समझ रहे थे कि उन्हें कृष्णभावनामृत का प्रसार सारे संसार में करना था, चाहे उन्हें यह अकेले ही क्यों न करना पड़े। पर, हाँ, वे अकेले नहीं थे, उनके अपने शिष्य थे। और वे उनकी अनुपस्थिति में भी नए केन्द्र खोल रहे थे। उन्हें बहुत शीघ्र उनके पास लौटना था और प्रगतिशील आन्दोलन का पर्यवेक्षण करना था।

• • •

मल्लिक परिवार प्रभुपाद को एक आध्यात्मिक पुरुष की अपेक्षा सम्बन्धी अधिक मानता था। मल्लिकों के लिए वे उसी नगर के एक चचेरे भाई थे, जिन्होंने अमेरिका में

कुछ सफलता प्राप्त की थी। नरेन्द्रनाथ मल्लिक जो प्रभुपाद के बचपन के मित्र थे, प्रभुपाद दादा को "भाई" कहते थे और उनके साथ बराबर मजाक किया करते थे।

मल्लिकों ने प्रभुपाद और उनके शिष्यों को प्रसन्नतापूर्वक एक बड़ा कमरा मन्दिर के अहाते में दे दिया, ताकि वे जब तक कलकत्ता में रहना चाहें, उसमें रह सकें। प्रभुपाद ने अपने सामान्य ढंग से कमरे को व्यवस्थित किया; फर्श पर चटाई बिछा दी; एक नीची मेज को अपनी डेस्क बना लिया और डेस्क की बगल में उनके पास जो थोड़ा सामान था, उसे रख लिया। वहाँ वे अध्ययन कर सकते थे, लिख सकते थे, अतिथियों का स्वागत कर सकते थे और विश्राम कर सकते थे। प्रतिदिन कुछ स्थानीय महिलाएँ प्रभुपाद और उनके शिष्यों के लिए टिफिन के डिब्बे में सादा प्रसाद ले आती थीं।

काली-पूजा-समारोह में बड़े हाल में काली की मूर्ति के समक्ष बहुत सारी भीड़ इकट्ठी होती थी। और प्रभुपाद *श्रीमद्भागवत* से वहाँ नियमित भाषण दिया करते थे। वे विभिन्न मल्लिक परिवारों के घरों में भी बोला करते थे। इन ह्रासोन्मुख संभ्रांत बंगाली परिवारों के मेजबान सदस्य प्रभुपाद और उनके शिष्यों को राधा-गोविन्द का प्रसाद देते थे : कटे फल, सिंघाड़े, अदरक की चटनी और भिगोई हुई फूली नमक मिली मूंग की फलियाँ।

जो लोग प्रभुपाद के कमरे में उन्हें मिलने आते, उनमें से अधिकतर की रुचि वास्तव में आध्यात्मिक जीवन में नहीं थी, लेकिन वे उनका आशीर्वाद चाहते थे। एक स्थानीय ब्राह्मण था, जिसका कार्य कुछ फूल, गिलास में जल और पीतल के पात्र में घिसा हुआ चंदन और कुमकुम लेकर एक दुकान से दूसरी दुकान पर जाना था। इन वस्तुओं का उपयोग करते हुए वह दुकानदारों को आशीर्वाद देता था और बदले में कुछ पैसे पाता था। यह जानकर कि प्रभुपाद वैष्णव थे, वह उनके पास आशीष लेने पहुँचा। उस ब्राह्मण के माथे पर वैष्णव तिलक (दो सीधी रेखाएँ) और शैव तिलक (तीन समतल रेखाएँ) दोनों थे। उसके चले जाने के बाद अच्युतानन्द ने पूछा, "स्वामीजी, वह कौन था?"

"वह किराए का ब्राह्मण है।" प्रभुपाद ने कहा, "जब वह वैष्णवों के पास जाता है, तो उन्हें आशीर्वाद देता है और जब वह शैवों के पास जाता है, तो पैसे पाता है। उसे जीविका कमानी है।"

एक अन्य पुरुष यह दावा करता आया कि वह प्रभुपाद के शिष्यों को हिन्दी पढ़ाएगा। उसने प्रभुपाद से कहा कि वे अमेरिका जाने में उसकी सहायता करें; लेकिन प्रभुपाद ने उससे कहा, "आप संन्यास ले लें, तब मैं आपको अमेरिका ले जाऊँगा।" दो भेंट के बाद उस आदमी ने आना बन्द कर दिया।

एक दिन मल्लिकों का एक सम्बन्धी जो कद में छोटा, गंजा और चमकीली आँखों

वाला था, हाथ में 'इंटरेस्टिंग स्टडीज' (मनोरंजक अध्ययन) नामक पुस्तक लेकर आया। उसने दार्शनिक प्रश्न पूछना आरम्भ किए, जो कर्म, ज्ञान और भक्ति के बारे में साधारण जिज्ञासाएँ थीं, लेकिन प्रभुपाद को बीच में टोककर वह स्वयं उनका उत्तर देने लगता था। अन्त में जब उसने एक और प्रश्न पूछा तो प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "तो आपका उत्तर क्या है?" उस व्यक्ति ने एक आम जवाब दिया। लेकिन बाद में, जब प्रभुपाद ने समझाना आरम्भ किया कि भगवान् कृष्ण, *भगवद्गीता* के प्रवक्ता परम ईश्वर हैं, तो उसने बीच में टोका, "आप ईश्वर को कृष्ण कह सकते हैं, शिव कह सकते हैं..."

"नहीं," प्रभुपाद बोले, "कृष्ण परम ईश्वर हैं, अन्य देवता हैं।" वह आदमी थोड़ा घबरा गया और उसने एक जन-प्रिय बंगाली निराकारवादी का नाम लिया, जिसका उपदेश था कि सभी देव और उपासना की सभी विधियाँ समान हैं।

"वह नया विद्वान है।" प्रभुपाद ने कहा, "*गीता* का उपदेश यह नहीं है। यह दूसरा उपदेश क्या है? वह सब हमारा भ्रम है।"

"अगर आप इसी तरह बात करते रहेंगे," उस आदमी ने क्रोध से कहा, "तो मुझे यहाँ से चले जाना पड़ेगा। कृपा करके परमहंसजी की आलोचना मत कीजिए।"

"क्यों नहीं," प्रभुपाद ने कहा, "यह व्यक्ति मनगढ़त बातें बनाने वाला है।" वह व्यक्ति उठा और यह कहता चला गया, "आप कृष्ण को नहीं जानते।"

प्रभुपाद अच्युतानन्द और रामानुज की ओर मुड़े और मुसकराए : "हर बार जब कृष्ण का नाम आता है, तो लोग कहते हैं, 'केवल कृष्ण ही क्यों?' लेकिन यही बात कृष्ण कहते हैं, *मत्तः परतरं नान्यत्* 'मुझ से बढ़कर सत्य कोई नहीं है।' इन बदमाश निराकारवादियों ने बंगाल को चौपट कर दिया है।"

एक दिन एक व्यक्ति ने प्रभुपाद को अनुदान के रूप में दो सौ रुपए दिए। प्रभुपाद ने पुजारी से राधा-गोविन्द के पहनावे का एक पुराना जोड़ा तुरन्त मँगाया। उस पहनावे को उन्होंने मन्दिर की कुछ वृद्ध महिलाओं को दिया और उन्हें दो सौ रुपए भी दिए और उनसे कहा कि वे राधा-गोविन्द के लिए जरी के काम का पहनावा तैयार करें। "राधा-गोविन्द हमारी देखभाल करते हैं," उन्होंने कहा, "इसलिए हम उनका भी ध्यान रखें।"

• • •

रामानुज की दाढ़ी विशाल थी। वह एक आम हिप्पी की तरह दिखाई देता था और वह जहाँ भी जाता था, उससे श्रील प्रभुपाद के विषय में भ्राँति होती थी। प्रभुपाद ने अच्युतानन्द से कहा, "अपने मित्र से दाढ़ी मुंड़ाने के लिए कहो।" अच्युतानन्द ने रामानुज से बात की, लेकिन वह रामानुज दाढ़ी मुंड़ाने को तैयार नहीं हुआ। प्रभुपाद चाहते थे कि

रामानुज इसके लिए अपने आप राजी हो जाये, इसलिए उन्होंने इस विषय में फिर नहीं कहा। लेकिन जब अमेरिका से *बैक टु गॉडहेड* की नई प्रति प्राप्त हुई तो उनके मन में एक नए विचार का उदय हुआ। पत्रिका में दो चित्र थे जिनमें हरिदास ठाकुर एक वेश्या का मत-परिवर्तन करते दिखाए गए थे। मत-परिवर्तन के बाद वेश्या अपने सिर के बाल मुंड़वा रही थी। चित्रों को रामानुज को दिखाते हुए प्रभुपाद ने पूछा, "इस चित्र और उस चित्र में क्या अन्तर है?"

"मैं नहीं जानता, स्वामीजी," रामानुज ने जवाब दिया।

"नहीं," प्रभुपाद ने चित्रों की ओर संकेत करते हुए कहा, "इस चित्र में और दूसरे चित्र में क्या अन्तर है?"

"ओह! वह भक्त हो गई है।"

"हाँ," प्रभुपाद ने कहा, "और क्या?"

"ओह, उसका सिर मुंड़ा है।"

"हाँ," प्रभुपाद ने कहा, "भक्त का सिर मुंड़ा होता है।"

"क्या आप चाहते हैं कि मैं सिर मुंड़वा लूं?"

"हाँ।"

रामानुज ने बाल मुंड़वा दिए। लेकिन कुछ दिन के अन्दर वह दाढ़ी और सिर के बाल फिर बढ़ाने लगा। "इसके बाद," प्रभुपाद ने अच्युतानन्द से कहा, "सस्ता दीक्षा-दान नहीं होगा। लोगों को कुछ सीखना भी चाहिए।"

रामानुज बदला नहीं। प्रभुपाद चाहते थे कि उनके प्रस्थान के बाद अच्युतानन्द और रामानुज भारत में रहकर वृन्दावन में अमेरिकन हाउस की स्थापना के लिए प्रयत्न जारी रखें। रामानुज ने अपनी निजी प्रतिक्रियाओं के बारे में अपने मित्र मुकुंद को सैन फ्रांसिस्को लिखा।

> मालूम हो कि हम उन्हें यथाशीघ्र रवाना करने की भरसक कोशिश कर रहे हैं, लेकिन यह दकियानूस भारत सरकार हमारे मार्ग में बाधाएँ पैदा कर रही है। जो व्यक्ति स्वामीजी को पी. फार्म की स्वीकृति दे सकता था, वह अभी डूबकर मर गया है। इसलिए यह स्वीकृति अब बम्बई से लेनी होगी। देर का यही कारण है। यहाँ कलकत्ते में हमें तरह-तरह के लोगों को सम्बोधित करने में बड़ा मजा आ रहा है। स्वामीजी अच्युतानन्द और मुझसे छोटा भाषण कराते हैं। मैं इसमें अधिकाधिक कुशल होता जा रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि वे हमसे इसलिए भाषण दिलाते हैं कि वे दिखाना चाहते हैं कि हम अमेरिकन वास्तविक वैष्णव हैं। और इसलिए वे हर

> एक से कृष्णभावनामृत का प्रचार कराना चाहते हैं।... यहाँ स्वामीजी के स्वास्थ्य की ठीक से देखभाल करना बड़ा कठिन है। एक कारण तो यह कि भारत में मिष्ठान्न परोसना एक बड़ी चीज माना जाता है और उसे इनकार करना शिष्टाचार के विरुद्ध है। और हमारे यहाँ हर तरह के मिलने वाले आते हैं। हम ११ बजे के पहले सोने नहीं जा पाते और स्वामीजी स्वभावत: ३ बजे सवेरे उठ जाते हैं। इस अर्थ में यहाँ के लोग बड़े अविचारशील हैं, लेकिन यदि अच्युतानन्द और मैं लोगों से जाने के लिए कहते हैं, तो वे स्वामीजी से पूछ बैठते हैं और स्वामीजी 'नहीं' कह देते हैं। जो हो, स्वामीजी के हृदय की धड़कन जरा तेज है और कभी कभी वह डरावने रूप में तेज हो जाती है। इसलिए मेरा सुझाव है कि तुम किसी हृदय-रोग-विशेषज्ञ से उनका परीक्षण कराना।... कृपा करके ऐसे डॉक्टर का इंतजाम कर रखना और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि स्वामीजी को खूब विश्राम मिलना चाहिए। मिलने वालों पर तुम बहुत अधिक अंकुश मत लगाना, क्योंकि अगर मिलने वाले अच्छे हुए, तो स्वामीजी को उनसे मिलना अच्छा लगता है। उनके दिल की धड़कन को सामान्य बनाने के लिए जो कुछ कर सकते हो, करना। उनकी गाड़ी को गतिशील स्थिति में रखने की जरूरत है, जिससे वे इस संसार में कम-से-कम दस वर्ष और रह सकें।

• • •

यह जानकर कि स्वामीजी अमेरिका शीघ्र ही वापस आने वाले हैं, उनके भक्तों के आवेदनों की भरमार हो गई। हर दल उनसे कहने लगा कि पहले वे उनके नगर-विशेष में जायें। ४ नवम्बर को प्रभुपाद ने मुकुंद को लिखा, "चूँकि तुम कहते हो कि मेरी अनुपस्थिति तुम लोगों को अब पहले से भी अधिक खलने लगी है, इसलिए मुझे भी लगता है कि बिना देर किए मैं यहाँ से प्रस्थान कर दूँ।" मुकुंद की पत्नी जानकी को भी उन्होंने लिखा, "हर मिनट मुझे तुम्हारी याद आती रहती है और चूँकि तुमने कहा था कि भारत से वापसी पर मैं सैन फ्रांसिस्को आऊँ, इसलिए मैं अपने वादे को पूरा करने की कोशिश कर रहा हूँ। मैं सीधे सैन फ्रांसिस्को आने की सोच रहा हूँ।" मुकुंद और जानकी को लिखे गए पत्र के अन्त में अच्युतानन्द ने स्वामी के स्वास्थ्य के विषय में विवरण जोड़ दिया :

> स्वामीजी स्वस्थ लगते हैं और वे नियमित रूप से रहते और कार्य करते हैं, लेकिन उनकी नाड़ी आमतौर से बहुत तेज चलती है। गत रात यह ९५ थी—उनके

लिए यह भी असाधारण रूप से तेज कही जायेगी, क्योंकि इसकी आम गति ८३ और ८६ के बीच होती है।

प्रभुपाद ने निश्चित किया कि वे और अधिक इस संयोग की प्रतीक्षा नहीं करेंगे कि मुकुंद उनके लिए स्थायी अधिवास प्राप्त करे। "मैं तुम्हारे देश में वापस जाना चाहता हूँ, जहाँ अच्छी हवा और अच्छा पानी है।" उन्होंने एक दिन अच्युतानंद से कहा, "हर दिन हमें पत्र मिल रहे हैं कि भक्तजन मुझे वहाँ चाहते हैं। मैं सोचता था कि मेरी अनुपस्थिति में उनकी भक्ति में गिरावट आ सकती है और मैं भारत आने के लिए अनिच्छुक भी था। लेकिन मैं देखता हूँ कि भक्ति में वृद्धि हो रही है। मेरे वहाँ जाने और उसके विस्तार का पर्यवेक्षण करने की आवश्यकता है। इसलिए मैं वापस जाना चाहता हूँ।"

अब केवल एक ही बाधा मालूम हो रही थी और वह थी पी-फार्म प्राप्त करने की जो बाहर जाने वाले हर भारतीय को स्टेट बैंक से लेना पड़ता था।

> "मैं अमेरिका के लिए प्रस्थान करने को बिल्कुल तैयार हूँ, लेकिन जैसाकि तुम जानते हो हमारी कार्य-कुशल सरकार कार्य करने में बहुत धीमी है। पी-फार्म को दाखिल किए लगभग एक महीना हो गया है, किन्तु यह अब भी लाल फीताशाही के चक्कर में पड़ा है। मुझे विजा आधे घंटे में मिल गया था। यात्रा-धन दो दिन के अन्दर जमा कर दिया गया था, किन्तु दुर्भाग्यवश रिजर्व बैक आफ इंडिया अनावश्यक विलम्ब कर रहा है। मैं किसी भी क्षण पी-फार्म पाने की आशा करता हूँ और ज्योंही वह मिलेगा, मैं तुम्हारे देश के लिए प्रस्थान कर दूँगा।

केवल यह निश्चित करने के लिए कि प्रभुपाद सबसे पहले सैन फ्रांसिस्को जायँगे, मुकुंद ने कलकत्ता एक तार भेजा, "स्वामीजी, ब्रह्मानंद और मैं सहमत हैं कि आप तुरन्त प्रस्थान करें। पहुँचने की निश्चित तिथि सूचित करें। मुकुंद।"

प्रभुपाद ने टोकियो के मार्ग से जाने की योजना बनाई थी। वहाँ एक दिन रुकने का उनका विचार था, "इस बात की टोह लेने के लिए कि वहाँ एक केन्द्र खोलने की सम्भावना है या नहीं।" टोकियो पहुँचकर वे टेलीफोन से मुकुंद को सैन फ्रांसिस्को पहुँचने का ठीक समय बता देंगे। लेकिन तीन सप्ताह बीत गए और प्रभुपाद पी-फार्म की प्रतीक्षा करते रहे।

इस बीच उन्हें न्यूयार्क से अच्छा समाचार मिला। मैकमिलन कम्पनी की *भगवद्‌गीता* में अभिरुचि सच्ची थी; करारनामा तैयार किया जा रहा था। ब्रह्मानंद से प्रसन्न होकर उन्होंने

११ नवम्बर को कृष्णभावनामृत साहित्य के वितरण के बारे में अपने भविष्य-विचार की व्याख्या करते हुए लिखा।

> अगर हमारे अपने प्रकाशन हैं, तो हम केवल एक केन्द्र से, न्यूयार्क या सैन फ्रांसिस्को से सारे संसार में अपने मत के प्रचार के लिए कार्य कर सकते हैं। हमें बी.टी.जी. प्रकाशनों में अधिकाधिक दत्तचित्त होना चाहिए और *श्रीमद्भागवत, चैतन्य चरितामृत* आदि जैसे वैदिक साहित्य का प्रकाशन करना चाहिए।

जब प्रभुपाद का मन अमेरिका में उनकी प्रतीक्षा कर रहे प्रचार-कार्य की ओर अधिकाधिक जाने लगा, तो वे इसका लेखा-जोखा करने में लगे कि उन्होंने अभी तक क्या किया था, आगे क्या करेंगे और उसे किस विधि से करेंगे।

> मैं श्रीमान् आल्टमैन से सहमत नहीं हूँ कि हमारा फैलाव बहुत विरल ढंग से हो रहा है। मेरे विचार से केवल एक निष्ठावान् व्यक्ति एक केन्द्र चला सकता है। आप जानते हैं कि २६ सेकंड एवन्यू का केन्द्र मैंने अकेले शुरू किया था। मैंने २०० डालर प्रतिमास के किराये का खतरा मोल लिया था, उस समय कोई सहायक नहीं था। मुकुन्द उस समय एक मित्र ही था और केन्द्र चलाने का उसका कोई दायित्व नहीं था। धीरे-धीरे कीर्तनानन्द और हयग्रीव मिल गए, किन्तु केन्द्र चलाने का उनका कोई दायित्व नहीं था। तब भी मैं केन्द्र चलाता रहा, केवल कृष्ण पर निर्भर रहकर। और तब कृष्ण ने मुझे हर चीज भेजी—आदमी, धन आदि। इसी तरह यदि एक निष्ठावान् व्यक्ति मिल जाता है और संसार के किसी भी भाग में केन्द्र खोलता है, तो कृष्ण हर तरह से उसकी सहायता करेंगे। कृष्ण से शक्ति प्राप्त किए बिना कोई कृष्णभावनामृत का प्रचार नहीं कर सकता। इन मामलों में शैक्षिक योग्यता या आर्थिक शक्ति से सहायता नहीं होती, वरन् उद्देश्य की सच्चाई से हमेशा सहायता मिलती है। इसीलिए मेरी इच्छा है कि तुम (ब्रह्मानंद) न्यूयार्क के प्रभारी रहो, सत्स्वरूप बोस्टन का प्रभारी रहे, मुकुंद सैन फ्रांसिस्को का प्रभारी रहे, जनार्दन मान्ट्रियल का रहे और नन्दराणी और दयानन्द लास एंजलेस के प्रभारी रहें और सुबलदास सन्ता फे का रहे। इस तरह तुम मेरे उदाहरण का अनुगमन करोगे, जैसा मैंने २६ सेकेंड एवन्यू में शुरू में किया था। अर्थात् तब प्रचार करना, भोजन बनाना, लिखना, वार्ता करना, कीर्तन करना—यह सभी एक व्यक्ति का कार्य था। मैं कभी श्रोताओं के बारे में नहीं सोचता था। मैं कीर्तन करने के लिए तैयार रहता, चाहे

> सुनने वाला एक भी व्यक्ति न हो। कीर्तन का सिद्धान्त भगवान् की महिमा का गान है, न कि भीड़ इकट्ठा करना। यदि कृष्ण सुनकर प्रसन्न होते हैं, तो वे निष्ठावान् भक्तों को ऐसे स्थान पर इकट्ठा कर देंगे। इसलिए मेरा उपदेश ग्रहण करो कि हजारों केन्द्र खुल सकते हैं, यदि हम हर केन्द्र के लिए एक निष्ठावान् व्यक्ति पा लें। केन्द्र आरम्भ करने के लिए अधिक व्यक्तियों की जरूरत नहीं है। यदि एक भी निष्ठावान् व्यक्ति है, तो वह केन्द्र शुरू करने के लिए काफी है।

१२ नवम्बर को प्रभुपाद ने कृष्णा देवी को लिखा,

> मैं सैन फ्रांसिस्को शीघ्र आ रहा हूँ। निश्चित तिथि मैं तुम्हे अगले सप्ताह में बताऊँगा। मैं तुमसे मिलने जल्दी ही आ रहा हूँ। तब हर चीज समायोजित हो जायेगी। आशा है, तुम ठीक हो।

और अच्युतानंद से स्वामीजी के स्वास्थ्य के विषय में टिप्पणियाँ बराबर प्राप्त होती रहीं।

> वहाँ के भक्तों से कहें कि स्वामीजी की पूरी देखभाल करें। उनको अधिक कार्य करने से रोकना बहुत मुश्किल कार्य है, लेकिन भक्तों को कड़ाई बरतनी चाहिए। उन्हें अब भी प्रतिदिन दवा लेनी पड़ती है और मालिश करानी पड़ती है।

२० नवम्बर को प्रभुपाद ने जल-जहाज द्वारा *श्रीमद्भागवत* के प्रथम तीन स्कन्धों की आठ सौ से अधिक प्रतियाँ न्यूयार्क भेजीं। और अगले दिन उन्हें अन्त में पी-फार्म मिल गया। उन्होंने तुरन्त पैन अमेरिकन एयरलाइंस से अपनी यात्रा का आरक्षण करा लिया और मुकुंद को तार भेजकर सूचित किया कि वे सैन फ्रांसिस्को २४ नवम्बर को १२.४५ अपराह्न पहुँचेंगे।

किन्तु उनके प्रस्थान में फिर विलम्ब हुआ—इस बार कलकत्ता में साम्यवादी दल की हड़ताल के कारण। सब कारोबार बन्द हो गया। कारों, बसों, रिक्शाओं और गाड़ियों का चलना ठप हो गया। दंगे शुरू हो गए। हत्याएँ और मार-काट होने लगीं। इस बीच प्रभुपाद राधा-गोविन्द मन्दिर में रुके रहे।

> तुम लोगों के देश में मेरा आना निश्चित हो गया है। लेकिन कलकत्ता में छोटे-

> मोटे उत्पातों के कारण मैं रवाना नहीं हो पा रहा हूँ। मेरे सैन फ्रांसिस्को के मित्र बहुत चिन्ताग्रस्त होंगे, क्योंकि मैंने उन्हें दो तार भेजे हैं, एक के द्वारा उन्हें अपने पहुँचने की सूचना देते हुए और दूसरे के द्वारा उसे रद्द करते हुए। आगे की व्यवस्था अनिश्चित है।

• • •

दो सप्ताह बीत गए। अपने कमरे में राजनीतिक हड़ताल के समाप्त होने की प्रतीक्षा करते हुए प्रभुपाद को उमापति का एक पत्र मिला। उमापति उन भक्तों में से एक था, जिसे न्यूयार्क में सितम्बर १९६६ के पहले दीक्षा-संस्कार के अवसर पर प्रभुपाद ने दीक्षित किया था। उमापति ने कृष्णभावनामृत का अभ्यास छह महीने तक छोड़ रखा था, किन्तु अब उसने यह बताने के लिए पत्र लिखा था कि वह कृष्णभावनामृत संघ में फिर लौट आया था। प्रभुपाद ने उत्तर दिया :

> यह मेरा कर्तव्य है कि तुम्हें सही चीज सच्चाई से दूँ और पाने वाले का यह कर्तव्य है कि वह आदर्श आध्यात्मिक विधानों के अनुसार कार्य करे। जब तुमने हमें छोड़ा, तो मैंने कृष्ण से तुम्हारी कृष्णभावनामृत में वापसी के लिए केवल प्रार्थना की, क्योंकि वह मेरा कर्तव्य था। कोई अच्छा व्यक्ति जो मेरे पास एक बार आध्यात्मिक प्रकाश के लिए आता है, तो यह मुझ पर निर्भर माना जाता है कि मैं उसे कृष्ण तक पहुँचाऊँ। शिष्य माया के वशीभूत होकर अपने सच्चे आध्यात्मिक गुरु पर सन्देह कर सकता है। लेकिन एक सच्चा गुरु किसी को एक बार शिष्य बना लेने पर उसे जाने नहीं देता। जब एक शिष्य अपने आध्यात्मिक गुरु पर सन्देह कर बैठता है, तो गुरु को खेद होता है कि वह माया से अपने शिष्य की रक्षा नहीं कर सका और कभी कभी वह आँखों में आँसू भरकर रुदन करने लगता है। जब हमारे गुरु महाराज जीवित थे, हमें एक अनुभव हुआ था। उनके शिष्यों में से एक को, जिसने संन्यास ग्रहण कर लिया था, एक दिन उसकी पत्नी बलात् खींच ले गई। मेरे गुरु महाराज आँखों में आँसू भरकर रोने लगे कि वे अपने शिष्य के आत्मा को नहीं बचा सके। इसलिए हमें माया के प्रभाव से हमेशा बचना चाहिए और इस बचाव के लिए एक ही गारंटी है कि हम निरापद भाव से हरे कृष्ण का जप करें।

जब प्रभुपाद ने लास एंजलेस के मन्दिर में लड़ाई होने का समाचार पाया तो उन्होंने नन्दराणी को लिखा :

> मैं जानता हूँ कि मेरी उपस्थिति की बहुत सख्त जरूरत है। सारी व्यवस्था हो चुकी है और मेरे प्रस्थान में केवल परिस्थितियाँ बाधक हो रही हैं। इसलिए चिन्ता मत करो। मैं तुम्हारे पास दो सप्ताह के अन्दर पहुँच रहा हूँ।

दिसम्बर के पहले सप्ताह के अन्त में हड़ताल समाप्त हुई और श्रील प्रभुपाद ने अपनी यात्रा का आरक्षण फिर कराया।

> तुम्हें जानकर प्रसन्नता होगी कि मैंने टोकियो और सैन फ्रांसिस्को के रास्ते से न्यूयार्क जाने का टिकट खरीद लिया है। मैं कल सवेरे साढ़े नौ बजे प्रस्थान कर रहा हूँ। मैं बैंकाक और हांगकांग होते हुए शाम को टोकियो पहुँच जाऊँगा। टोकियो में मैं चौबीस घंटे आराम करूँगा और १४ दिसम्बर की रात में सैन फ्रांसिस्को के लिए रवाना होऊँगा। स्थानीय समय के अनुसार मैं पी.ए.ए. ८४६ से उसी दिन, १४ दिसम्बर, को १२.४५ अपराह्न सैन फ्रांसिस्को पहुँच जाऊँगा। इस आशय का एक तार मैं कल भेज चुका हूँ और आशा है कि कार्यक्रमानुसार मैं सकुशल पहुँचूँगा। मुझे जानकर प्रसन्नता है कि सत्यव्रत और तुम भगवान् चैतन्य के उपदेशों को प्रकाशित कराने की कोशिश कर रहे हो। तुम नहीं जानते कि यह समाचार सुनकर मैं कितना प्रसन्न हूँ। जब एक पुस्तक प्रकाशित होती है, तो मुझे लगता है कि मैंने साम्राज्य जीत लिया है। इसलिए जितनी पुस्तकें प्रकाशित कर सकते हो, करो। उससे हमारे संघ की प्रतिष्ठा और सुन्दरता में वृद्धि होगी। निराकारवादियों के पास कहने के लिए कोई ठोस चीज नहीं है, लेकिन चूँकि उनके पास धन है और उन्होंने इतना सारा रद्दी साहित्य छाप रखा है, इसलिए उन्होंने सस्ती लोकप्रियता प्राप्त कर ली है। तुम कल्पना कर सकते हो कि हमारा संघ कितना शक्तिशाली हो जायेगा, जब हम भी उतना अधिक साहित्य प्रकाशित कर लेंगे। हमें अंग्रेजी में ही साहित्य प्रकाशित नहीं करना है, वरन् जर्मन, फ्रेंच जैसी अन्य महत्त्वपूर्ण भाषाओं में भी करना है।

जब अन्त में प्रभुपाद के प्रस्थान का दिन आ गया, तो उन्होंने अच्युतानन्द और रामानुज को आखिरी आदेश दिए।

"बस, भगवान् कृष्ण से प्रार्थना करो कि मैं अमेरिका जा सकूँ।" उन्होंने अच्युतानन्द से कहा।

"मैं यह कैसे कर सकता हूँ?" अच्युतानन्द ने उत्तर दिया, "आप मुझे छोड़ रहे हैं।"

"नहीं," श्रील प्रभुपाद ने कहा, "हम हमेशा एक रहेंगे, यदि तुम मेरे उपदेशों को याद रखोगे। यदि तुम प्रचार करोगे, तो तुम शक्तिशाली बनोगे और ये सभी उपदेश उचित परिप्रेक्ष्य में होंगे। जब हम प्रचार बन्द कर देते हैं, तो हर वस्तु गतिहीन बन जाती है और हम जीवन से हाथ धो बैठते हैं। यहाँ, भारत में भी लोग सोचते है कि वे हर चीज जानते हैं, पर यह उनकी भूल है। कृष्ण-चर्चा का अन्त नहीं है। ईश्वर असीम है। इसलिए कोई नहीं कह सकता, "मैं ईश्वर के बारे में हर चीज जानता हूँ।" जो कहते हैं कि वे ईश्वर के बारे में हर चीज जानते हैं, वे कुछ नहीं जानते। इसलिए हर एक तुम्हारी सराहना करेगा। डरो नहीं।"

• • •

अच्युतानंद : *जब मैं स्वामीजी को हवाई अड्डे पर प्रणाम करके और विदा करके अपने कमरे में लौटा, तो मुझे सब कुछ सूना मालूम हुआ। मुझे बहुत अकेलापन और दुर्बलता अनुभव हुई। मैं श्री श्रीराधा-गोविन्द के सामने कमरे में गया और अपनी माला जपता हुआ आगे-पीछे घूमने लगा। "मैं क्या प्रचार करूँगा?" मेरे पैर के नीचे से काले सफेद संगमरमर का फर्श खिसक गया। मेरे पैर दरारों पर जा पड़े, फिर दरारों के बीच हो गए और फिर बार-बार सफेद-काले संगमरमर पर मैं चलता रहा। तब मुझे अनुभव हुआ कि मैं राधा-कृष्ण को नहीं देख रहा था। इसलिए मैं उनके सामने बैठ गया और राधा-गोविन्द के चमकदार श्रीविग्रह को देखता रहा और मेरे नेत्र आँसुओं से भर गए।*

• • •

टोकियो में रुकने का अधिकतर समय प्रभुपाद ने होटेल जाने, कमरा तय करने, स्नान करने, विश्राम करने और खाने-पीने में बिताया। दूसरे दिन सैन फ्रांसिस्को की उड़ान पकड़ने के लिए वे हवाई अड्डे गए। पर इस बीच उन्होंने सरकार के एक सचिव से बात की और बताया कि कृष्णभावनामृत एक विश्वजनीय दर्शन है। उससे मनुष्य की मूल एवं शाश्वत चेतना का पुनर्जागरण होता है। और उन्होंने मानव-समाज के लिए कृष्णभावनामृत की निर्णायक आवश्यकता को स्पष्ट किया। लेकिन सचिव ने कहा कि उसे विश्वास था कि जापान की सरकार किसी धार्मिक आन्दोलन को कोई सहायता नहीं दे सकेगी।

प्रभुपाद को चिढ़ हुई। यह शिक्षित व्यक्ति इतना अनजान था कि वह कृष्णभावनामृत को एक अन्य साम्प्रदायिक धर्म समझ रहा था। प्रभुपाद चाहते थे कि बुद्धिमान लोग कृष्णभावनामृत को समझने की कोशिश करें और जाने कि *गीता* वास्तविक ज्ञान है, दिव्य ज्ञान है, जो इन्द्रियों और मन के तुच्छ ज्ञान से परे है। लेकिन प्रभुपाद को विमान पकड़ना

था; जापान को प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

• • •

यात्रियों और विमान-कर्मचारी-दल के लिए प्रभुपाद केसरिया पहने हुए एक वयोवृद्ध भारतीय थे। परिचारिकाओं को पहले मालूम नहीं था कि वे अंग्रेजी बोलते थे या नहीं। लेकिन जब उन्होंने फल माँगे तब परिचारिकाएँ जान गईं कि वे अंग्रेज़ी बोल सकते थे और वे उदार-मन यात्री थे। वे शान्त थे, चश्मा लगाए वे घंटों भारतीय धर्मशास्त्र की कोई प्राचीन पुस्तक पढ़ते रहे, या कपड़े की थैली में माला के मनकों पर अंगुलियाँ फेरते हुए होंठ हिलाकर जप करते रहे, या कभी कभी आँखें बन्द करके, कम्बल से अपने आपको ढककर आराम करते रहे।

कोई नहीं जानता था, न किसी को यह जानने की चिन्ता थी कि वे क्या कर रहे थे। कोई भी नहीं जानता था कि सैन फ्रांसिस्को में चिंतित युवक उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे, या न्यूयार्क में मैकमिलन कम्पनी उनकी *भगवद्गीता* का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित करना चाहती थी या उन्होंने दो देशों में आध्यात्मिक केन्द्र स्थापित कर रखे थे और उनकी योजना सारे संसार में ऐसे केन्द्र खोलने की थी। प्रभुपाद धैर्यपूर्वक बैठे रहे, वे अधिकतर जप में लीन थे, उनका हाथ माला की थैली में था, वे कृष्ण पर निर्भर थे, समय निकलता जा रहा था।

दस घंटे की उड़ान के बाद वायुयान सैन फ्रांसिस्को में उतरा। सैकड़ों अन्य यात्रियों के साथ पंक्ति में खड़े होकर प्रभुपाद निकास द्वार की ओर बढ़े। टर्मिनल भवन पहुँचने के पहले ही उन्होंने देखा कि लम्बी संलग्न सुरंग के दूसरे सिरे पर गोविन्द दासी और अन्य शिष्य शीशे की दीवार की उस ओर से मुसकरा रहे थे और हाथ हिलाकर उनका स्वागत कर रहे थे। जब वे टर्मिनल भवन में प्रविष्ट हुए और शीशे की दीवार के निकट पहुँचे, तो उनके शिष्य घुटने जमीन पर टेककर उन्हें दण्डवत्-प्रणाम करने लगे। जब उन्होंने सिर उठाया तो प्रभुपाद मुसकराने लगे। वे गलियारे में आगे बढ़ते रहे। शिष्य भी उनके साथ आगे बढ़ते रहे; केवल शीशे की दीवार उनके बीच में थी। वे शिष्यों की दृष्टि से ओझल हो गए, जब उन्हें सीढ़ी से आप्रवासन और तट-कर से निबटने जाना पड़ा।

सीढ़ियों के नीचे की जगह पर भी शीशे लगे थे और प्रभुपाद देख सकते थे कि पचास से अधिक शिष्य और मित्र उत्सुकतापूर्वक उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। जब शिष्यों ने उन्हें फिर देखा, तो वे एक साथ 'हरे कृष्ण' चिल्ला उठे।

स्वामीजी उन लोगों को आश्चर्यजनक लगे। भारत में छ महीने बिताने से उनका रंग कुछ भूरा हो गया था, वे अधिक युवा और स्फूर्तिमय लगते थे। वे मुसकराए और उन्होंने

गर्वपूर्वक अपने हाथ ऊपर उठाए। भक्त प्रसन्नता के मारे रो रहे थे।

जब प्रभुपाद तट-कर जाँच के काउंटर पर खड़े थे, तो उन्हें भक्तों का कीर्तन सुनाई दे रहा था, शीशे की दीवार के कारण आवाज कुछ मंद हो गई थी। तट-कर अधिकारियों ने कीर्तन की ओर ध्यान नहीं दिया, यद्यपि केसरिया पहने यात्री और प्रसन्नता से भरे उन कीर्तनियों के बीच सम्बन्ध देख पाना कुछ कठिन नहीं था।

श्रील प्रभुपाद पंक्ति में खड़े रहे; वे कभी-कभी कीर्तन कर रहे अपने शिष्यों की ओर देख लेते थे। चूँकि वे आठ सौ पुस्तकें और वाद्य-यंत्रों से भरी कई पेटियाँ पहले ही भेज चुके थे, इसलिए निरीक्षक की मेज पर रखने के लिए उनके पास केवल एक सूटकेस था। विधिपूर्वक निरीक्षक ने हर वस्तु को देखा : लड़कियों के लिए सूती साड़ियाँ, जगन्नाथ अर्चाविग्रहों के लिए रेशमी मालाएँ, करताल, केसरिया धोतियाँ और कुर्ते, नारियल घिसने की जाली और आयुर्वेदिक दवाओं की छोटी शीशियाँ।

'ये क्या हैं ?' इंस्पेक्टर ने पूछा। छोटी शीशियाँ अजीब दिख रही थी और उसने एक दूसरे इंसपेक्टर को बुलाया। देर होने लगी। स्वामीजी के शिष्य क्षुब्ध हो गए, क्षुद्र-मनोवृत्ति वाले तट-कर निरीक्षकों की इस जाँच-पड़ताल से, जो स्वामीजी की हर चीज को इतनी बारीकी से देख रहे थे, कसकर बन्द की गई शीशियों को खोलकर सूंघ रहे थे और उनमें बन्द दवाओं की जाँच कर रहे थे।

निरीक्षक सन्तुष्ट प्रतीत हुए। प्रभुपाद ने अपना सूटकेस बन्द करने की कोशिश की लेकिन वे जिप खींच नहीं पा रहे थे। फिर देर होने लगी। भक्तजन जो अब भी उत्सुकता से कीर्तन में लगे थे, देख रहे थे कि स्वामीजी अपने पीछे खड़े सज्जन की सहायता से जिप को खींचकर सूटकेस बन्द करने में सफल हुए।

स्वामीजी शीशे के दरवाजे की ओर बढ़े। भक्त पागलों की तरह कीर्तन करने लगे। जब वे दरवाजे से निकल रहे थे, तब एक भक्त ने शंख बजाया, जिसकी प्रतिध्वनि सारे हाल में गूँजने लगी। भक्तों ने प्रभुपाद को मालाएँ पहनाई और उनकी ओर दबाव डालते हुए आगे बढ़े और उन्हें फूल अर्पित किए। वे उनके बीच इस तरह दाखिल हुए, जैसे एक प्यारा बाप अपने प्यारे बच्चों के बीच पहुँचकर उनके आलिंगन का आदान-प्रदान करता है। ●